Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XV, Issue No. 1, April-2018, ISSN 2230-7540

सूरदास का जीवन परिचय एवं युग

Pushpa Rani*

Research Scholar, Singhania University, Pacheri Bari, Rajasthan

सारांश – सूरदास का स्थान न केवल हिन्दी साहित्य में अपितु मध्ययुग की महानतम् विभूतियों में अग्रणी है। 'सूरदास' नाम प्रायः अन्धे भक्त गायक के लिए प्रयुक्त होने लगा है। मध्ययुग में इस नाम से कई भक्त कवि और गायक हुए है। सूरदास का जन्म कब हुआ? इस विषय में कई मतभेद हैं परन्तु उनकी तथाकथित रचनाओं 'साहित्य लहरी' और 'सूरसागर सारावली' के आधार पर यह कहा गया कि उनका जन्म संवत् 1540 वि० (सन् 1583ई०) में हुआ था। परन्तु विद्धानों ने इसे अप्रामणिक सिद्ध कर पुष्टिमार्ग में प्रचलित इस जनश्रुति के आधार पर कि सूरदास श्रीमद्वल्लभाचार्य से 10 दिन छोटे थे, यह निर्धारित किया कि सूरदास का जन्म बैशाख, शुक्ल 5, संवत 1535 वि० (सन् 1478 ई०) को हुआ था।

----------X----------

प्रस्तावना

श्री हरिराय जी कृत–भावप्रकाशवाली '84 वैष्णवन की वार्ता' में लिखा है कि सूरदास का जन्म दिल्ली से चार कोस ब्रज की ओर स्थित एक 'सीही' नामक ग्राम में हुआ। जनश्रुतियों के आधार पर हिन्दी के कुछ विद्धानों ने सूर की जन्मभूमि रूनकता को भी माना है। डॉ० श्याम सुन्दरदास ने भी अपनी इतिहास 'हिन्दी भाषा और साहित्य' के पृष्ठ 322 (सं०1994 के संस्करण) पर सूर की जन्मभूमि रूनकता लिखी है। हरिराय जी की भावप्रकाशवली 84 वार्ता के अनुसार सूरदास की जन्मभूमि 'सीही' ग्राम ही है।

माता–पिता

हरिराय जी की 84 वार्ता से ज्ञात होता है कि सूरदास जी के माता–पिता एक निर्धन सारस्वत ब्राह्मण थे। सूरदास के तीन बड़े भाई थे। सूरदास अन्धे थे, इसलिए माँ–बाप इनकी ओर ध्यान नही देते थे। उपेक्षाओं में घिरे रहने के काारण इन्होनें अपना घर छोड़ दिया। इनके विवाह का उल्लेख वार्ता में कही नही मिला। एक स्थान पर उल्लेख है कि सूरदास अपने गाँव से चार–कोस की दूरी तालाब के किनारे रहने लगे और उनके पास अनेक सेवक आने लगे और सूरदास का वैभव भी बढ़ने लगा। सूरदास जी को एक दिन वैराग्य हो आया और उस समय स्वंय सोचा,–"जो देखा मैं श्री भगवान् के मिलन अर्थ वैराग्य करि के घर सो निकस्यो हतो सो यहाँ माया ने ग्रसि लियो। मोकू अपनो जस काहे को बढ़ावनो हतो, जो मैं श्री प्रभु को जस बढ़ावती तो आछो। और यामे तो मेरो बिगार भयो?" इससे यह ज्ञात होता है कि वे अपने जीवन में सांसारिक वैभव का सुख भोग चुके थे, परन्तु विवाह करके उन्होने ऐसा किया था, इसका कोई प्रमाण नही है। सूरदास ने स्त्री–सुख तथा माया एवं सांसारिक भोगों से मन में ग्लानि प्रकट की है। इस दोहे में मानसिक वृतियों के प्रति घृणा का भाव व्यक्त किया है।

अब मैं नाच्यौ बहुत गोपाल।

काम क्रोध को पहिर–चोलना कंठ विषय की माल।

सुक चंदन विनोद सुख यह जर जरन बितायो।

सूरदास जी अन्धे थे अथव जन्मान्ध

सूरदास की रचनाओं में कई स्थानों पर उनके अंधे होने का उल्लेख मिलता है। उन्होनें स्वयं अपनी रचनाओं में अपने अंधे, निपट अंधे होने की बात कही है। परन्तु उन्होनें कही यह उल्लेख नही किया गया कि वे जमान्ध थे अथवा बाद में अंधे हुए थे। कहीं–कहीं यह भी जनश्रुति सुनने में आई कि ये किसी युवती पर आसक्त हो गये थे और अपनी आँखे फोड़ ली थी। श्री हरिराय जी ने सूर के जन्मांध होने पर बहुत जोर दिया है।

मेरी तो गतिपति तुम अनतहिं दुख पाउँ।

सूर कूर आँधरौ मैं द्वार परयो गाऊं।

श्री हरिराय जी लिखते है– "सूरदास जी के जन्मत ही सों नेत्र नाही है। और नेत्रन को आकार गटेला कह नाही ऊपर भोंह मात्र है सो या भाति सों सूरदास जी को स्वरूप है।" हरिराय जी कहते है, "जन्में पाछे नेत्र जायँ तिनको आँधरो कहिये, सूर न कहिये, और ये तो सूर है।" सूरसागर के प्रारम्भिक पद में –

सूरदास भगवत्कृपा के सहारे सब कुछ सम्भव समझते है और सूर को भी जन्मान्ध मानते हुये दिव्य दृष्टिसम्पन्न मानते है ।

बंदौ श्रीहरि पद सुखदाई।

जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै अँधरे को सब कुछ दरसाई।

बहिरो सुने मूक पुनि बोले रंक चलै सिर छत्र धराई।

सूरदास स्वामी करूणामय बार बार बंदौ ते पाई।

'84 वैष्णवन की वार्ता' में उल्लेख है कि शरणागति के समय सूर ने आचार्य जी तथा गोवर्द्धन नाथ जी के दर्शन किये। ऐसा आशय है कि उन्होनें केवल आचार्य जी के समीप जाकर श्रवरणेन्द्रिय से उनकी उपस्थिति का अनुमान किया। वार्ता में सूर के अंधे होने और उनकी दिव्य दृष्टि होने की कुछ कथाएँ भी दी है। सूरदास का भक्तिपूर्ण पद गायन सुनकर अकबर बहुत प्रसन्न

www.ignited.in

हुए किन्तु उन्होनें सूरदास से प्रार्थना की कि वे उनका यशगान करें परन्तु सूरदास ने "नाहिन रह्यौ मन में ठौर" से प्रारम्भ होने वाला पद गाकर यह संकेत कर दिया कि वे केवल कृष्ण के यश का वर्णन कर सकते है, किसी अन्य का नही। इसी प्रसंग में 'वार्ता' में पहली बार बताया गया कि सूरदास अन्धे थे। इस पद के अन्त में 'सूर ऐसे दर्श को ए मरत लोचन प्यास' शब्द सुनकर अकबर ने पूछा था कि तुम्हारे लोचन तो दिखाई नही देते, प्यासे कैसे मरते है?" सूर ने उत्तर दिया कि यह भगवान की कृपा का ही फल है।

दूसरी कथ वार्ता में यह है कि सूरदास जी श्रीकृष्ण के दर्शनों के करने के लिए गोकुल जाया करते थे। सूरदास जी अपने परमाराध्य के शृंगार का अनुपम वर्णन कीर्तन के द्वारा करते थे। कहा जाता है कि सूरदास जी अपने इष्टदेव के शृंगार का वर्णन ज्यों का त्यों ही अपने कीर्तन में किया करते थे। एक बार गोस्वामी जी के पुत्र श्री गिरिधर जी से गोकुलनाथ जी ने कहा कि सूरदास जी, जैसा शृंगार नवनीतप्रिय जी का होता है वैसा ही वस्त्र–आभूषण वर्णन करते है। एक दिन मनोहर एवं अनुपम शृंगार कर इनकी परीक्षा लो। अस्तु, उन्होनें ऐसा ही किया। आसाढ़ के दिन थे। ठाकुर जी को कोई वस्त्र नही पहिनाये गये, केवल मोती पहना दिये गये। जब शृंगार के दर्शन खुले तब सूर को बुलाया गया और उनसे ठाकुर जी के शृंगार का कीर्तन करने को कहा गया। उस समय दिव्यदृष्टि से देखकर उन्होनें यह पद गाया –

देखे री हरि नंगम नंगा।

जल–सुत भूषन अंग बिराजत बसन–हीन छवि उठत तरंगा।

अंग अंग प्रति अमित माधुरी निरिष लजित रति कोटि अनंगा।

किलकत दधि–सुत मुष ले मन भरि सूर हँसत ब्रज जुवतिन संगा।

जाति

गोसाई हरिराय जी की 84 वार्ता में सूरदास जी को सारस्वत ब्राह्मण बताया है। सूदरास की जाति के सम्बन्ध में काफी वाद–विवाद रहा है। 'साहित्य लहरी' के एक पद के अनुसार कुछ समय तक सूरदास को भट्ट माना जाता रहा। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने इस विषय में खुशी प्रकट की थी कि सूरदास महाकवि चन्दबरदाई के वंशज थे। किन्तु बाद में अधिकतर पुष्टिमार्गीय स्त्रोतों के आधार पर यह प्रसिद्ध हुआ कि वे सारस्वत ब्राह्मण थे। 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' में मूलतः सूरदास की जाति के विषय में कोई उल्लेख नही किया गया। उनके सारस्वत ब्राह्मण होने के प्रमाण पुष्टिमार्ग के अन्य वार्ता साहित्य में भी है। डॉ० मुंशीराम शर्मा के अनुसार सूरदास ब्रह्मभट्ट ही थे। यह सम्भव है कि ब्रह्मभट्ट होने से ही वे परम्परागत कवि–गायकों के वंशज व सरस्वती पुत्र और सारस्वत नाम से विख्यात हो गये हों। वैसे सूरदास के ब्राह्मण होने का कोई संकेत नही मिला अपितु उनके अनेक पदों में ब्राह्मणों की हीनता का उल्लेख मिलता है। इस विषय में श्रीधर ब्राह्मण के अंग–भंग तथा महराने के पाँडेवाले प्रसंग दृष्टव्य है। अजामिल तथा सुदामा के प्रसंगों में भी उनकी उच्च जाति का उल्लेख करते हुए सूर ने ब्राह्मणत्व के साथ कोई ममता नही प्रकट की। इसके अतिरिक्त 'सूरसागर' में ऐसा कोई संकेत नही मिलता, कि सूर ब्राह्मण जाति के सम्बन्ध में कोई आत्मीयता का भाव रखते थे। दानलीला के एक पद में उन्होनें स्पष्ट रूप में कहा कि कृष्ण भक्ति के लिए उन्होनें अपनी जाति ही छोड़ दी थी। वे हरिभक्तों की जाति के थे, अन्य किसी जाति से उनका कोई सम्बन्ध नही था।

जात पात पूछे न कोय, श्रीपति के दरबार अर्थात् जो हरि को भजता है वह हरि का है।

व्यवसाय

सूरदास जी जन्मान्ध थे अतः वैसे तो उनका कोई व्यवसाय या धंधा नही था। लेकिन वे जब छः वर्ष के थे तब सकुण बताया करते थे। इसके बदले में वे कोई पैसा नही लेते थे। जब वे सीही से दूर किसी सरोवार के निकट झोपड़ी बनाकर रहते थे तो वे गायनवादन करते थे। और शकुन भी बताते थे। गोघाट पर श्री बल्लभाचार्य जी से दीक्षा लेने पर गुरू जी ने गोवर्द्धन पर श्री नाथ जी के मंदिर पर कीर्तनीया का पद उन्हे प्रदान किया। अन्यथा उनका कोई व्यक्तिगत व्यवसाय और धंधा नही था जिससे आय या आमदनी प्राप्त हो सकें। केवल भगवान का श्रीमद्भगवत के अनुसार कृष्ण लीलागान करना ही उनका व्यवसाय था।

शिक्षा एवं बाल्यावस्था

सूर की हिन्दी साहित्य को देन उनकी अमर कृति 'सूरसागर' है जो सूर की प्रकारड विद्वता तथा काव्य अभिव्यक्ति का स्वर्णिम भाव एवं अक्षय भण्डार है। हरिराय जी के अनुसार उन्होनें लक्षावधि पद बनायें। 84 वार्ता के भावप्रकाश में हरिराय जी कहते है कि सूरदास के चार नाम है। और इन चारों की छाप उनके पदों में झलकती है– सूर, सूरदास, समरजदास और सूरस्याम।

डॉ. जर्नादन मिश्र जी का मत है कि सूरस्याम और सूरजदास छाप वाले पद सूरदास कृत नही है। सूर के काव्य के विषय में वार्ता से यह भी ज्ञात होता है कि उनके जीवन–काल में ही मेल हो गया था और लोग सूरदास के नाम से पद बनाकर गाते थे। 84 वार्ता से तथा 'भक्तमाल' से ज्ञात होता है कि सूर एक उच्च कोटि के कवि थे।

सूरदास जी अपने गाँव से चार कोस दूर के एक स्थान पर रहते थे, वहाँ वे पद बनाते थे और गायन–विद्या का सब समान उन्होनें एकत्रित कर लिया था। ऐसा हरिराय जी 84 वैष्णवन की वार्ता में लिखते है। हरिराय जी कहते है जब सूरदास जी गऊघाट पर आ गये– "सूर को कंठ बहोत सुन्दर हतो, सो गान विद्या में चतुर सगुन बताइवे में चतुर। उहाँ हूँ सेवक बहुत भये, सो सूरदास जगत में भये।" इस समय सूरदास 'स्वामी' कहलाते थे। सूरदास ने कविता करना और गान–विद्या सीखी, इसका संकेत कही नही मिलता। बल्लभसम्प्रदाय में दीक्षित होने से पहले सूरदास जी गंधर्व–विद्या में निपुण थे। काव्य रचना करते थे और उनके वाक्–सिद्धि भी थी। वार्ता से ज्ञात होता है कि इस समय वे विनय के पद गाते थे। सूरदास ईश्वर उपासना दास्य भाव से किया करते थे। बल्लभसम्प्रदाय में आने के बाद सूर ने अपने गुरू श्रीवल्लभचार्य जी से शिक्षा ग्रहण की। आचार्य जी ने सर्वप्रथम सूर को श्रीमद्भगवत की स्वयं लिखी सुबोधिनी टीका का बोध कराया। सूरदास ने "तामे ज्ञान वैराग्य के न्यारे–न्यारे भक्ति भेद, अनेक भगवत् अवतार, सो तिन सबन की लीला को बरनन कियो है।" सूर के ज्ञान का तथा उनकी आत्म–अनुभूति

का भाव उनके अनेक पदों में झलकता है। अकबर के समक्ष उन्होनें एक पद– "मनारे करि माधो सेा प्रीति"–माया, यह सूर–पचीसी के नाम से प्रसिद्ध है। सूरदास भगवत् प्रेमी थे और सदा उन्ही के श्री चरणों में रहते थे।

बाल्यावस्था

सूरदास जी का बाल–जीवन सुखपूर्वक व्यतीत नही हुआ। जन्मान्ध होने के कारण माता–पिता भी उनके हित में कोई ध्यान नही देते थे। उनको अशुभ या मनहूस मानते थे। जैसे– संतान को माता–पिता का प्यार–दुलार मिलता है उससे वे सदैव वंचित रहे। एक बार की घटना से प्रमणित होता है कि बाल्यकाल में माता–पिता या घरवाले उनसे कैसा व्यवहार करते थे। एक बार की घटना है कि उनके पिता को दान में कुछ अशर्फियाँ प्राप्त हुई थी। और चूहे गोथली अर्थात् बटुआ को खींचकर छत पर ले गए और छत में एक बिल में अशर्फियाँ गिर गयी। उनके पिता को जब ढँढने पर अशर्फियाँ नही मिली तो वे अंधे सूरदास को वे भला–बुरा कहने लगे। तत्पश्चात् सूरदास ने उनसे कहा कि मैं आपकी अशर्फियाँ बता सकता हूँ कि कहाँ पर है। किंतु मेरी एक शर्त है कि मुझे घर छोड़ने की अनुमति प्रदान करें। इस घटना से स्पष्ट होता हे कि सूरदास माता–पिता के लिए एक अवांछित बालक थे। अत– सूरदास को जैसा किस पहले बताया जा चुका है कि उन्हे माता–पिता का स्नेह एवं वात्सल्य प्राप्त नही हुआ। वे सदैव उदास रहते थे, और उनका कंठ मधुर था तथा बाल्यकाल से ही उनकी रूचि संगीत कला में थी। अन्धे होने के कारण वे अन्य बालको से नही खेलते थे। वे घर में ही पड़े रहते थे। अतः उनका बाल्यकाल जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि सुखपूर्वक व्यतीत नही हुआ। विकलांग होने के कारण उनकी मानसिकता भी हीन–भावना से ग्रस्त थी। जब उनको घर में सुख नही था तभी उन्होनें ने घर छोड़ा। घर छोड़ने के बाद अनाथ बालक की कोई सुध लेने वाला नही था। ईश्वर प्रदत्त मधुर कंठ और शकुन शास्त्र के कारण ही बचपन से ही लोगों के आदर के पात्र बने। साधारण छोटे बालक की कला पर लोग मुग्ध रहते थे और उस गाँव के मुखिया ने उनके लिए कुटीर बना दी थी और नाना प्रकार के वाद्य यन्त्रों का भी प्रबन्ध कर दिया था। गायन–विद्या में प्रवीण होने के कारण गाँव के मुखिया ने उनके भोजनादि का प्रबंध भी कर दिया था। उनकी कीर्ति चारों तरफ फैल गई थी कि वे सकुण बताने में प्रवीण है। एक बार यहाँ भी एक घटना घटित हुई कि गाँव के मुखिया की गाय चुराकर दूसरे गाँव का मुखिया ले गया। जब गाँव के मुखिया ने सूरदास जी से पूछा तब सूर ने कहा कि आपकी गाय अमुक गाँव के मुखिया के घोड़ो के पास अस्तबल में बंधी हुई है। तब गाँव का मुखिया दल–बल सहित लाठियाँ लेकर उस गाँव में जाकर अस्तबल में बंधी अपनी गाय को वापिस ले आए। तब सूरदास जी की प्रशंसा बहुत अधिक होने लगी। सूरदास जी लगभग पन्द्रह वर्षों तक वहाँ रहे। अतः उनका बचपन छः वर्ष की आयु तक अपने घर में व्यतीत हुआ और शेष कुछ वर्षों तक अन्य स्थान पर व्यतीत हुआ। सूरदास जी ने अपने को 'जनमत का ही आँधरौ' कहा है। ऐसे अपंग, विकलांग लोगों का रक्षक केवल भगवान ही होता है । उनको कोई विधिवत् शिक्षा प्राप्त नही थी। जन्मान्ध होने के कारण वे आजीवन निरक्षर ही रहे स्वयं लिख भी नही पाते थे। परिवार या समाज में कुछ सुनकर ही भगवान का भजन करते थे।

संदर्भिका

प्रभुदयाल मीतल (2015). सूरदास की वार्ता, अग्रवाल प्रैस मथुरा, सं.।

डॉ. प्रेम शंकर (2015). कृष्ण काव्य और सूर, स्मृति प्रकाशन 124, शाहदरा बाग, इलाहाबाद।

डॉ. ब्रजेश्वर शर्मा (1999). सूरदास, जीवन और काव्य का अध्ययन, हिन्दी परिषद, प्रयाग, तृतीय संस्करण 1999

डॉ. ब्रजेश्वर शर्मा (2015). सूरदास, लोक भारती प्रकाशन 15ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2015

मनमोहन गौतम (1963). सूर की काव्य कला, भारती साहित्य मंदिर, दिल्ली, द्वितीय संशोधित 1963

Corresponding Author

Pushpa Rani*

Research Scholar, Singhania University, Pacheri Bari, Rajasthan

E-Mail –